चतुर्थ अध्याय

4:संगीत मकरंद में वर्णित तालों का अध्ययन

भारतीय संगीत में ताल की अवधारणा अति प्राचीन काल से वेदों, पुराणों, उपनिषदों, महाकाव्यों, काव्यशास्त्रों, संगीत ग्रंथों इत्यादी में प्राप्त होती है। भारतीय संस्कृति की नींव में ही संगीत विधमान है, जो अपने इत्र से निरंतर अपनी सुगंध फैला रहा है। सामवेद से वर्तमान तक विभिन्न संगीत ग्रन्थों में ताल का स्थान आलौकिक जान पड़ता है। संगीत में ताल का वही स्थान है, जो काव्य में छन्द का है, क्योकि छन्द की सहायता से प्रत्येक अक्षर की सुंदरता को रक्षित किया जा सकता है। छन्द अर्थात् वेदों के वाक्य के वह भेद जो अक्षर की गणना के अनुसार किया गया हो, वेद वाक्य जिसमें वर्णों या मात्राओं की गणना के अनुसार विराम आदि के नियम हो, पद्य, वर्ण या मात्राओं की गणना के अनुसार पद या वाक्य को रखने की व्यवस्था हो, पद्यबन्ध छन्दों के लक्षणादि की विद्या ही छन्द है।

इस विषय में वेदों की कथानुसार ऐसा माना जाता है, कि देवताओं व असुरों के मध्य युद्ध हुआ था, जिसमें देवता शक्ति व मंत्रों द्वारा युद्ध करने लगे परंतु असुर अपनी मायावी शक्तियों से मंत्रों को अव्यवस्थित करने लगे तब आसुरी शक्ति से बचाव के लिए प्रत्येक मंत्र को छन्द का कवच रूप दे कर देवताओ ने मंत्रों का रक्षण किया छन्द अर्थात् लघु, गुरु एवं प्लुत के नियम जिसमें मंत्रों को बांध दिया गया।[1] इस कथा से संगीत का यह तात्पर्य है, कि प्रत्येक बंदिश ताल में गुथी व बंधी हुयी है, जिससे यह सुरक्षित रह सके। इसलिए ताल का महत्व संगीत में अत्यंत मत्वपूर्ण है, जो नियंबद्धता को प्रदर्शित करता है। संगीत में ताल और छन्द ही यथार्थत गति प्रदान करते है। प्रत्येक काल मापन ही ताल है। अमरकोश के अनुसार ताल: काल क्रियामानम: अर्थात् संगीत में ताल काल क्रिया को निश्चित समय में नियम के अनुसार बांध के रक्षित कर सकता है। ताल विहीन संगीत की कोई सार्थकता नहीं है। जिस प्रकार मानव जीवन में समय की निश्चितता से समृद्धि आती है, उसी प्रकार संगीत में ताल से अनुशासन, सुगठिता व समृद्धता उत्पन्न होती है। प्राचीन ग्रन्थों में ताल व लय के विभिन्न उदाहरण प्राप्त होते है। भारत देश की संस्कृति व परंपरा में प्रगैतिहासिक काल से वर्तमान काल के साहित्य शास्त्र व संगीत ग्रन्थों में ताल का उल्लेख आवश्यकतानुसार प्राप्त होता है। शोध छात्रा इससे प्रेरित हो कर संगीत के प्राचीन ग्रंथ नारद कृत संगीत मकरंद में वर्णित ताल की विस्तृत जानकारी व प्रस्तुत माहिती

(1) दाधिच, डॉ० पुरू/अष्टोत्तर शतताल लक्षणम्/पृष्ठ-1

तथा तालात्मक तथ्यों को आधार मानते हुए तालों के नाम व उनके लक्षण के विषय में बताते हुए तत्कालीन स्वरूपों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है, जो इस शोधपत्र की भूमिका है। संगीत मकरंद के द्वितीय अध्याय नृत्यध्याय के द्वितीय पाद के श्लोक संख्या तीन से श्लोक संख्या सोलह तक तालों के नामों का उच्चारण किया गया है, इसके उपरांत एकोत्तरशत तालों के लक्षण बताए गए है। इस विषय में यह कहा जा सकता है, की वर्तमान में इन तालों का प्रयोग इनके प्राचीन नाम के अनुसार नही किया जा रहा परंतु ऐसा नही है, कि इन तालों को प्रयोग में नहीं लाया जा सकता। तालों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए तथा विषय की गंभीरता को समझने के लिए उससे जुड़े सभी महत्वपूर्ण तथ्यों को जानना व समझना अति आवश्यक होता है।

इस विषय में काव्यसाहित्य के ग्रथों की सहायता लेना अनिवार्य प्रतीत होता है,क्योकि छन्दों के लघु, गुरु आदि के वर्ण विन्यास को आधार मान कर ही तालों के छन्द की रचना की गयी। काव्य मे छन्दों की रचना की लिए लघु, गुरु, प्लुत तीन अंगो का होना पर्याप्त था, किन्तु संगीत के सृजन की दृष्टि से और अंगो की आवश्यकता प्रतीत हुयी अंगो के निर्माण के लिए लघु को ही आधार वर्ण मानते हुए लघु के चतुरांश को अणुद्रुत का नाम दिया गया, लघु के अर्द्धभाग को द्रुत का नाम दिया गया है (द्रुत को प्राचीन शास्त्रों मे व्योम व बिन्दु का नाम से भी संबोधित किया गया है।) ,इसी अनुपात से लघु से द्विगणित गुरु, लघु से त्रिगुणित प्लुत, लघु से चतुगुणित काकपाद बना जो संख्या के अनुसार सबसे बड़ा है। इनकी मात्रा स्वरूप को देखे तो अणु द्रुत का मात्रा काल ¼ का होता है, द्रुत का मात्रा काल ½ होता है, लघु का मात्रा काल 1 का होता है, गुरु का मात्रा काल 2 का होता है, प्लुत का मात्रा काल 3 का होता है, तथा काकपाद का मात्रा काल 4 का होता है। प्राचीन शास्त्रो के अनुसार तालों के सांकेतिक अंग, चिन्ह, मात्रा संख्या तालिका रूप में इस प्रकार से प्रस्तुत है।[1]

प्राचीन शास्त्रो के अनुसार मात्रा व चिन्ह-

(तालिका सं०-1)

अंग	चिन्ह	मात्रा
अणुद्रुत या विराम	‿	$\frac{1}{4}$ अणु मात्रा
द्रुत	०	$\frac{1}{2}$ आधीमात्रा
लघु	I	1 मात्रा
गुरु	S	2 मात्रा
प्लुत	Ƨ	3 मात्रा
काकपद	+	4 मात्रा

(1) सेन, अरुण कुमार/भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन/ पृष्ठ-272

वर्तमान में इनके स्वरूप को परिवर्तित इसलिए किया गया क्योकि इन मात्राओं का प्रयोग संभवत: कठिन सा प्रतीत होत था, तथा मात्रा का पूर्णांक न होने के कारण इनमें ताल अंग का निर्माण कठिनता से होता था। इसे आसान रूप देने के लिए लघु को चतुगुणित कर के इसी क्रमानुसार चतुगुणित अनुपात में अंगो की मात्र संख्या को परिवर्तित कर दिया गया परिवर्तित अनुपात से अणुद्रुत की मात्रा संख्या 1 हो गयी, द्रुत की मात्रा संख्या 2 हो गयी, लघु की मात्रा संख्या 4 हो गयी, गुरु की मात्रा संख्या 8 हो गयी, प्लुत की मात्रा संख्या 12 हो गयी, काकपद की मात्रा संख्या 16 हो गयी। जिसका विवरण तालिका में स्पष्ट रूप से दिया गया है।[1]

वर्तमान मे प्रयुक्त होने वाले प्रतिकात्मक अंग,मात्रा व चिन्ह-

(तालिका सं०-2)

अंग	चिन्ह	मात्रा
अणुद्रुत या विराम	‿	1 मात्रा
द्रुत	०	2 मात्रा
लघु	।	4 मात्रा
गुरु	ऽ	8 मात्रा
प्लुत	ऽ३	12 मात्रा
काकपद	+	16 मात्रा

वर्णोच्चारणकालस्तु मात्रा इत्यभिधीयते ।[2]

प्राचीन ग्रन्थों में "मात्रा" का मूल स्त्रोत "मा" धातु से माना जाता है। मात्रा से ताल के काल को मापा जाता है। किसी ध्वनि व वर्ण के उच्चारण में जो समय लगता है,उसे मात्रा कहा जाता है, मात्रायें दो प्रकार की होती है, हस्व व दीर्घ मात्रा। पाँच हस्व अक्षर के उच्चारण की काल अवधि को एक मात्रा या लघु मात्रा कहते थे।

पंचलघुक्षरोच्चारकालो मात्रा समीरिता।

तदर्द्ध द्रुतमित्युक्तं तदर्धचाप्यणुद्रुतं।

अणुद्रुतफलं क्वापि विरामाणुद्रुते इति॥

इति संगीतरत्नावल्याम्॥[3]

---

(1) दाधिच, डॉ० पुरू/अष्टोत्तर शतताल लक्षणम्/पृष्ठ-2

(2) सेन, अरुण कुमार/भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन/पृष्ठ-271

(3) सेन, अरुण कुमार/भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन/ पृष्ठ-272

जैसे- **<u>क ख ग घ न</u>** इन सम्पूर्ण वर्णो के उच्चारण की काल अवधि को एकमात्रिक (एक मात्रा) या लघु कहा जाता था। **<u>क ख ग घ न</u>, <u>च छ ज झ ण</u>** इन सम्पूर्ण वर्णो के उच्चारण की काल अवधि को द्विमात्रिक (दो मात्रा) या गुरु कहा जाता था। इसके पश्चात **<u>क ख ग घ न</u>, <u>च छ ज झ ण</u>, <u>प फ ब भ म</u>** इन सम्पूर्ण वर्णो के उच्चारण की काल अवधि को को त्रिमात्रिक (तीन मात्रा) या प्लुत कहा जाता था। लघु, गुरु,प्लुत के पश्चात द्रुत व अणुद्रुत पर विचार कर के यह ज्ञात होता है, कि लघु अर्थात् एक मात्रा से आधे समय को द्रुत तथा द्रुत के भी आधे समय को अणुद्रुत मात्रा कहा जाता था। प्राचीन शास्त्रकारो का ऐसा मानना तर्कसंगत है, कि संगीत का मूल सात स्वरों मे निहित है, उसी प्रकार ताल का भी मूल अणुद्रुत (अणुमात्रा), द्रुत (अर्द्धमात्रा), लघु (एक मात्रा), गुरु (दो मात्रा), प्लुत (तीन मात्रा) इन पाँच मात्राओ मे निहित है।

प्राचीन शास्त्रो में मार्गी तालों में लघु, गुरु, प्लुत का प्रयोग देखने को मिलता है, जिसका पूर्ण प्रमाण भरत कृत नाट्यशास्त्र की पंचमार्गी तालों में प्राप्त होता है। देसी तालों के लिए लघु, गुरु,प्लुत के साथ द्रुत का भी प्रयोग किया जाता था। इसके साथ ही कहीं-कहीं देसी तालों के लिए विरामन्तयं शब्द का उल्लेख भी प्राप्त होता है। यह ताल के चिन्ह व अंग कहलाते है, तालियों की संख्या चिन्हों के अनुसार निर्धारित की जाती है, अर्थात् यह कहा जाता है, कि जितने चिन्हों का प्रयोग किया जाता है, उतनी ही तालियाँ उस ताल कि मानी जाती है। प्राचीन शास्त्रकारों द्वारा तालों के लक्षणों को बताते समय काव्यशास्त्र,व्याकरण की कुछ पद्धतियों को भी ग्रहण किया है, जिनमे से तालों के लक्षण मे प्रयुक्त होने वाली मुख्य पद्धति "गण" पद्धति है। गण आठ प्रकार के होते है जिनके चिन्ह इस प्रकार से है– य, म, त, र, ज, भ, न, स जिनको गणों व मात्रा के साथ इस प्रकार से लिखा जाता है।[1]

(तालिका सं०-3)

यगण	ISS	एक लघु दो गुरु
मगण	SSS	तीन गुरु
तगण	SSI	दो गुरु एक लघु
रगण	ISI	गुरु, लघु, गुरु
जगण	SIS	लघु, गुरु, लघु
भगण	SII	एक गुरु दो लघु
नगण	III	तीन लघु
सगण	IIS	दो लघु एक गुरु

(1) दाधिच, डॉ० पुरू/अष्टोत्तर शतताल लक्षणम् / पृष्ठ -8

इनके स्मरण के लिए हिन्दी व्याकरण का सूत्र भी प्रचलित है-**"यमाताराजभानसलगा"**[1] संस्कृत के ग्रंथकारो के कथानुसार कुछ श्लोको मे अति संक्षेप रूप से ताल चिन्हो को दर्शाया गया है, जिसमे लघु, गुरु, प्लुत के लिए ल (लघु), ग (गुरु),प (प्लुत) का प्रयोग देखने को मिलता है। प्राचीन ग्रंथो के विभिन्न श्लोको मे विरामान्त्यंलघु व विरामान्त्यंगुरु आदि विभिन्न शब्दो का प्रयोग देखने को मिला है। परंतु लक्षण मे कहीं भी काकपद का प्रयोग नही प्राप्त होता। ताल लक्षण मे देवनागरी लिपि के व्यंजन जिनका प्रयोग सदृश्य होने के कारण जब उन शब्दों का नाम लेने की आवश्यकता प्रतीत होती है, तो उन अक्षरों के आगे "कार" जोड़ कर उसका नाम संबोधित किया जाता है। जैसे-आकार, ककार, मकार, सकार, रकार से अ, क, म, स, र शब्द का बोध होता है। नारद कृत संगीत मकरंद मे इन शब्दों का प्रयोग तालों के लक्षण मे विभिन्न श्लोको मे प्राप्त होता है। जैसे- संगीत मकरंद नृत्याध्याय द्वितीय पाद के श्लोक सं० 39 मे "सकार" शब्द का प्रयोग सदृश्य है ।

प्लुतो गश्च प्लुतो गश्च ताले विजयसंज्ञके।

सकारश्च सकारश्च जयमङ्गलनाम च ॥[2]

4:1 संगीत मकरंद के पुर्ववर्ती ग्रंथो में वर्णित तालों का अध्ययन

वैदिक काल से ही छंद साहित्य तथा वृत्ति (लय) का वर्णन प्राप्त होता रहा है, लय तो सभी प्रकार के देशी व विदेशी संगीत मे विधमान है परंतु ताल भारतीय संगीत की आत्मा है जो संगीत के जीवित होने का प्रमाण देती है। ठाकुर जयदेव सिंह के अनुसार वैदिक संगीत जब गंधर्व संगीत मे विकसित हुआ तब ताल के प्रयोग का आरंभ हुआ जिसका वर्णन भरत कृत नाट्यशास्त्र मे प्राप्त होता है। तालों का अस्तित्व यूं तो प्राचीन काल से सामवेद के शिक्षा व संगीत ग्रन्थ नारदीय शिक्षा मे भी मार्गी तालों का उल्लेख मिलता है किन्तु काल निर्धारण व सपष्टता ना होने के कारण वैदिक काल के पश्चात विद्वानों द्वारा भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र को ही संगीत का आधार ग्रंथ माना जाता है। संगीत मकरंद के पूर्ववर्ती ग्रंथो की चर्चा करे तो इसमे सभी वेद ,पुराण उपनिषद, उपपुराण आदि आधार ग्रन्थों का समावेश है परंतु संगीत विषय से संबंधित सामाग्री कुछ ग्रन्थों मे प्राप्त होती है ताल के विषय मे चर्चा करे तो इसका पूर्ण विस्तृत वर्णन संगीत के आधार ग्रंथ भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र मे प्राप्त होता है किन्तु कुछ पुराणों, उप पुराणों मे भी यह द्रष्टव्य है। मार्कण्डेय पुराण मे ताल के

---

(1) दाधिच, डॉ० पुरू/अष्टोत्तर शतताल लक्षणम्/पृष्ठ-3

(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/द्वितीय पाद:/श्लोक-39/पृष्ठ-36

विषय मे यह संकेत प्राप्त होता है जिसका संगीत मकरंद के द्वितीयअध्याय नृत्याध्याय के वर्णित श्लोक मे वर्णन किया गया है।

चतुरस्रस्तिसमिपस्तालंखंखाभिधेतथा।

चतुर्विधोभवेत्तालस्तत्खरूपंनिरूप्यते ॥(1)

अर्थात्-चतुरश्र, त्र्यश्र, मिश्र, खंड यह ताल के चार प्रकार होते है, तालों के यह प्रकार अक्षर एवं वर्ण के आधार पर माने गए है, जिसमे चार वर्णों से युक्त चतुरश्र ताल, तीन वर्णों से युक्त त्र्यश्र ताल चतुरश्र व त्र्यश्र के वर्णो से युक्त सात वर्णों की मिश्र ताल तथा पाँच वर्णों से युक्त खंड ताल होती है। इसके पश्चात मार्कण्डेय पुराण मे तीन प्रकार की लय द्रुत, मध्य, विलम्बित का वर्णन प्राप्त होता है। जिसका विस्तृत वर्णन संगीत ग्रंथ भरतकृत नाट्यशास्त्र के31वें अध्याय के श्लोक से प्राप्त होता है।

संगीत मे ताल का जन्म निश्चित व स्वभाविक प्रक्रिया के तहत हुआ ताल का वर्णन विशेष रूप से संगीत ग्रन्थों मे ही प्राप्त होता है। संगीत मकरंद के पूर्ववर्ती संगीत ग्रंथों मे आचार्य भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र है, जिसे वृहद व आधारभूत संगीत ग्रंथ माना जाता है।

4:1:1 भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र-

"यद् घनं नाम वाद्यमातोद्यं प्रोक्तमुद्दष्टिं तस्य तालेन भाविना शम्यादिसशब्दावा-
पनि: शब्दक्रियाविशेषणयोगे न सति यस्ताल: परिच्छित्यात्मककालखण्डेः क्रियारूपो
द्रव्यात्मा स एव गीतक्रियाप्रमाणपरिच्छेदोपाय: ।(2)

ताल अर्थात् धारण करना तल का अर्थ धारण करना ही है जैसे वस्तु को हाथ मे धारण करने से हस्थतल कहा जाता है, शरीर को पैर धारण करते है तो पदतल कहा जाता है, पृथ्वी प्रत्येक वस्तु को धारण करती है जिसे पृथ्वीतल या भूतल कहा जाता है। इसी प्रकार काल को प्रदर्शित करने वाले गायन, वादन व नृत्य को क्रियात्मक रूप से धारण करने वाले खंड को ताल कहते है, जिसमे सशब्द व नि:शब्द क्रिया के योग व संगीत की तीनों विधाओं की क्रियाओं के काल को नापने का साधन है वह ताल कहलाता है। ताल की उत्पत्ति 'त' (तांडव) अर्थात् शिव और 'ल' (लास्य) अर्थात् पार्वती के रूप से मानी जाती है।

कलाकालप्रमाणेन ताल इत्यभिसंज्ञित: ॥(3)

अर्थात्- विभिन्न कलाओं के द्वारा गीत का कालकृत विभाग ताल कहलाता है।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-78/पृष्ठ-45
(2) सेन, अरुण कुमार/भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन/पृष्ठ-3
(3) शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल/नाट्यशास्त्र/31 वां अध्याय/श्लोक-6

यस्तु तालं न जानाति न स गाता न वादक: ।

तस्मात् सर्वप्रयतनेन कार्य तालावधरणम् ॥[1]

अर्थात्- भरतमुनि के अनुसार ताल का व्यवस्थित ज्ञान न होने पर कोई भी अच्छा गायक, वादक नहीं हो सकता इसलिए सभी को प्र्यत्न के साथ ताल का ज्ञान अति आवश्यक है।

लयतालकालपातप्रमाणयोगेषु तत्वज्ञ:। [2]

अर्थात्- लय, ताल, काल, पात एवं प्रमाण योजना को जाने व समझे बिना कोई भी उत्तम गायक नहीं बन सकता। भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र के 31वें अध्याय मे पंचमार्गी तालों का विशेष वर्णन प्राप्त होता है।

त्र्यस्त्रश्च चतुरश्रश्च तालो द्विविधः स्मृतः।

द्विविधस्यापि तालस्य त्वेका प्रकृतिरिष्यते ॥

तथा योनिद्वयं चात्र कीर्त्यमानं निबोधत ॥

चच्चत्पुटश्च (स्तु) विज्ञेयस्तथा चाचपुटो बुधैः।

चतुरश्रस्तु विज्ञेयस्तालश्चच्चत्पुटो बुधैः॥

त्र्यश्रश्चाचपुटः प्रोक्तो गुरूलध्वक्षरान्वितः।

आदौ गुर्वक्षरं ज्ञेयं लघुनी गुरू चैव हि॥

त्र्यश्रः स खलु विज्ञेयस्तालश्चाचपुटो बुधैः॥

आदौ हे गुरूणी यत्र लघु च प्लुतमेव च ।

स विज्ञेयः प्रयोगज्ञैस्तालश्चच्चत्पुटाश्रयः॥

तालों के दो प्रकार चतुरश्र व त्रयश्र माने गए है जिनकी मूल प्रकर्ति एक समान है चच्चत्पुट को चतुरश्र जाति का माना जाता है एवं चाचपुट को त्रयश्र जाति का माना जाता है । गुरु व लघु अक्षरों से इनका आवंटन किया जाता है। चच्चत्पुट ताल मे दो गुरु, एक लघु, व एक प्लुत होता है। चाचपुट ताल मे एक गुरु,दो लघु व अंत मे एक गुरु होता है। इस दोनों तालों के मिश्रण मिश्र ताल कहलाता है, जिसमे षट्पितापुत्रक व पंचपाणि ताल सम्मलित है। भरत मुनि द्वारा जिन पांच तालों क वर्णन किया वे पंचमार्गी तालों के नाम से जानी जाती है जो इस प्रकार है- चच्चत्पुट, चाचपुट, सम्पद्वेष्टिक, षट्पितापुत्रक, उद्धट्ट इनमे से प्रथम चच्चत्पुट है, जिसे शास्त्रो में अन्य नाम चञ्चत्पुट, चञ्चूपुट तथा चतुरस्त्र ताल से भी संबोधित किया जाता है। शास्त्रों में पंचमार्गी तालों

---

(1) शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल/नाट्यशास्त्र/31 वां अध्याय/श्लोक-368-369

(2) शास्त्री, बाबूलाल शुक्ल/नाट्यशास्त्र/33 वां अध्याय/श्लोक-2

के तीन भेद बताए गए है-यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल, यथाक्षर अर्थात् यथा+अक्षर=जैसा ताल वैसे अक्षर जिसमें ताल के नाम के अनुसार वर्णो की व्यवस्था की जाती है। द्विकल अर्थात् प्रत्येक मात्रा के दो गुरु , चतुष्कल अर्थात् प्रत्येक मात्रा के चार गुरु इस अनुपात से ताल स्वरूप यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल के अनुसार **चच्चत्पुट** का यथाक्षर स्वरूप (ऽऽ।ऽ)=8 मात्रा, द्विकल स्वरूप (ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ)=8 गुरु 16 मात्रा,चतुष्कल स्वरूप(ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ)=16 गुरु 32 मात्रा।

ताल का स्वरूप	ऽ	ऽ	।	ऽ
तालाक्षर-	चच्	चत्	पु	टम्
मात्राएं-	1 2	3 4	5	6 7 8
ताल क्रिया-	सन्निपात	शम्या	ताल	शम्या

प्राचीन मार्ग तालों मे दूसरा स्थान चाचपुट ताल का है इसे चाचपुट या त्रयश्रताल भी कहा जाता है**। चाचपुट** का यथाक्षर स्वरूप (ऽ।।ऽ)= 6 मात्रा,द्विकल स्वरूप (ऽऽ ऽऽ ऽऽ)=6 गुरु 12 मात्रा, चतुष्कल स्वरूप(ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ)=12 गुरु 24 मात्रा।

ताल का स्वरूप	ऽ	।	।	ऽ
तालाक्षर-	चा	च	पु	टम्
मात्राएं-	12	3	4	56
ताल क्रिया-	शम्या	ताल		ताल

षट्पितापुत्रक ताल मे यथाक्षर स्वरूप (ऽ।ऽऽ।ऽ)12 मात्रा, द्विकल स्वरूप (ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ)=12 गुरु 24 मात्रा, चतुष्कल स्वरूप(ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ)=24 गुरु 48 मात्रा।

ताल का स्वरूप	ऽ	।	ऽ	ऽ	।	ऽ
तालाक्षर-	**षट्**	पि	ता	पु	त्र	कम्
मात्राएं-	1 2 3	4	5 6	7 8	9	10 11 12
ताल क्रिया-	सन्निपात	ताल	शम्या	ताल	शम्या	ताल

सम्पद्वेष्टिक ताल का यथाक्षर स्वरूप (ऽऽऽऽऽ)=12 मात्रा, द्विकल स्वरूप(ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ)=12 गुरु 24 मात्रा,चतुष्कल स्वरूप(ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ)=24 गुरु 48 मात्रा।

ताल का स्वरूप	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
तालाक्षर-	सम्	पक्	वेष्	टा	क:
मात्राएं-	123	45	67	89	101112
ताल क्रिया-	ताल	शम्या	ताल	शम्या	ताल

उद्धट्ट ताल का स्वरूप (SSS)=6 मात्रा, द्विकल स्वरूप (SS SS SS)=6गुरु12मात्रा,चतुष्कल स्वरूप(SSSS SSSS SSSS)=12 गुरु 24 मात्रा। इस प्रकार से भरत कृत नाट्यशास्त्र में यथाक्षर द्विकल, चतुष्कल के अनुसार ताल का विवरण प्राप्त होता है।[1]

ताल का स्वरूप	S	S	S
तालाक्षर-	उद्	धट्	ट:
मात्राएं-	12	34	56
ताल क्रिया-	निष्क्राम	शम्या	शम्या

आचार्य भरतमुनि द्वारा नाट्यशास्त्र मे पंच मार्गी तालों का वर्णन मे दिया गया है। **इति पंचमार्गी तालानि**[2] इसके उपरांत विष्णुधर्मोत्तर पुराण जिसका काल 400 ई० से 600 ई० शती के मध्य माना जाता है जो की नाट्यशास्त्र के काल के बाद का है, नाट्यशास्त्र का काल काणे के अनुसार 300 ई० शती है।[3] विष्णुधर्मोत्तर पुराण मे भी तालों का वर्णन देखने को मिलता है यह एक उपपुराण है जो तीन खंडों मे विभाजित है इसके प्रथम खंड मे अन्य पुराणों के समान ज्योतिष, वंश, भूगोल, वंश्यानुचरित्र इत्यादि का वर्णन प्राप्त होता है। द्वितीय खंड मे धर्म तथा राजनीति का वर्णन प्राप्त होता है। संगीत की दृष्टि से तीसरा खंड महत्वपूर्ण माना जाता है इसमे संस्कृत, व्याकरण प्रकृत भाषा, छंद, काव्य, गान, वाद्य, नृत्य, चित्रकारी, प्रतिमा निर्माण इत्यादि का वर्णन प्राप्त होता है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण मे ताल, वृति, लय के अंतर्गत चच्चत्पुट, चाचपुट,पञ्चपाणि, षट्पितापुत्रक तालों के नाम का वर्णन द्रष्टव्य है।[4]

4:1:2 आचार्य दत्तिल कृत दत्तलिम-

युग्म चच्चत्पुटस्थ: स्यादयुक् चाचपुटाश्रयः ।

तालाक्षराणामेतेशां संस्थाप्य गुरूलाघवम् ।।[5]

आचार्य दत्तिल के अनुसार चच्चत्पुट, चाचपुट यथाक्षर ताल माने जाते है अर्थात् जैसा ताल वैसे अक्षर जिसमें ताल के नाम के अनुसार वर्णो की व्यवस्था की जाती है। इनमे लघु गुरु को क्रम से रखने के पश्चात युग्म के अंत का अक्षर प्लुत रखा जाता है। दत्तिल द्वारा चच्चत्पुट को युग्म व चाचपुट को अयुग्म स्वरूप को माना है।

---

(1) जौहरी, डॉ० सीमा/ताल एक ऐतिहासिक यात्रा/ पृष्ठ-28-29
(2) आचार्य भरत प्रणीत नाट्यशास्त्र/अभिनव भारती टीका/अध्याय इकत्तीस/पृष्ठ-150-155
(3) सिंह, ठाकुर जयदेव/भारतीय संगीत का इतिहास/पृष्ठ 228
(4) सिंह, ठाकुर जयदेव/भारतीय संगीत वाद्य/पृष्ठ-231
(5) दत्तिल प्रणीत-दत्तलिम्/तालोद्देश्य/श्लोक-123/पृष्ठ-26

उत्तरः पंचपाण्याख्यः षट्पि{ता}पुत्रकाक्षरः।।

अयुग्मोत्यः प्लुताद्यन्तस्तथा चाहात्र कोहलः ।[1]

दत्तिल द्वारा उत्तर नामक ताल जिसको पंचपाणिताल के नाम से भी जाना जाता है यह षट् पि ता पुत रक अक्षर के युग्म से बनती है इसका पहला व अंतिम अक्षर प्लुत होता है। इस प्रकार दत्तिल कृत दत्तलिम मे तालों का वर्णन युग्म व अयुग्म के रूप मे किया गया है।

4:1:3 मतंगमुनि कृत बृहद्देशी- मतंगमुनि द्वारा रचित ग्रंथ मे ताल का अध्याय अनुपलब्ध व खंडित है परंतु बृहद्देशी के प्रथम प्रकरण मे अलंकार,पद व गीति के अंतर्गत अक्षर छंद से युक्त गीति का वर्णन प्राप्त होता है जिसका स्पष्ट रूप से संबंध लय व मात्रा से है तथा गीति के चार प्रकार बताए है

प्रथमा मागधी ज्ञेया द्वितीया चार्धमागधी ।

संभाविता तृतीया च चतुर्थी पृथुला स्मृता ॥[2]

प्रथम मागधी, द्वितीया अर्धमागधी, संभाविता तृतीय तथा पृथुला चौथी है। गीति के प्रकारों मे समय व काल ही प्रमुख तत्व है जो ताल को दर्शाते है। सिंह भूपाल के अनुसार मतंगमुनि द्वारा चतुरश्र और त्रयश्र दो प्रकार के तालों का वर्णन किया है जिनके अंतर्गत चच्चत्पुट, चाचपुट, षपितापुत्रक, हेला, त्रिगता, संपक्केष्टा, नत्कुट, नत्कुटी, खञ्जक, खन्जिकी आक्रोडिता, विलम्बा ये बारह अङ्ग एवं कुटिला, क्षिप्तिका, त्र्यश्रा चतुस्रा, मिश्रका तथा चटुला उपभङ्ग कहलाते हैं।[3]

4:2 संगीत मकरंद में वर्णित तालों का अध्ययन

तालशब्दस्यनिष्पत्तिःप्रतिष्ठार्थेनधातुना ।

गीतंवाद्यं च नृत्यं च भातितालेप्रतिष्ठितम् ॥[4]

अर्थात्- ताल शब्द की निष्पत्ति (उत्पत्ति) तल धातु मे घञ् प्रत्यय लगाने पर होती है, जो गीत वाद्य व नृत्य मे प्रतिष्ठित होती है। प्रतिष्ठित का अर्थ यहाँ पर व्यवस्थित करना, बांधना या आधार प्रदान करना माना गया है। अर्थात् गीत वाद्य व नृत्य को विभिन्न तत्वों के साथ व्यवस्थित सूत्र मे बांधते हुए आधार प्रदान करना ताल कहलात है। पंडित नारद कृत संगीत मकरंद की मूल प्रति Oriental Institute of Baroda प्राच्य विद्या

---

(1) दत्तिल प्रणीत-दत्तलिम्/तालोद्देश्य/श्लोक-127/पृष्ठ-26
(2) मतंगमुनि कृत बृहद्देशी/ (अनुवादक डी० बी० क्षीरसागर)/श्लोक-170-181
(3) शारंगदेव कृत/ संगीत रत्नाकर/अनुवादक सुभद्रा चौधरी/अध्याय 5/पृष्ठ-8-9
(4) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-48/पृष्ठ-43

मंदिर बड़ौदा से प्राप्त है, जो सम्पूर्ण संगीत जगत में सर्वमान्य है। पंडित नारद कृत संगीत मकरंद के द्वितीय अध्याय नृत्याध्याय द्वितीय पाद: के एकोत्तरशत तालनामानि व तालललक्षणानि में पृष्ठ संख्या 34 में एकोत्तरशत ताल के नाम व पृष्ठ संख्या 35-39 तक श्लोक संख्या 17 से 74 तक दिये गए परंतु यहाँ पर विषय से संबन्धित उचित जानकारी देने का प्रयास किया गया है। नारद कृत संगीत मकरंद मे जिन तालों के नाम बताए गए है, जिनको एकोत्तरशत ताल कहा जाता है। जिसका पूर्ण श्लोक सहित संस्कृत हिन्दी अनुवाद शोधार्थी द्वारा गुनिजनों के सानिध्य मे द्वितीय अध्याय मे दिया जा चुका है।

4:2:1 संगीत मकरंद ग्रंथ के अनुसार तालों के नाम, चिन्ह व मात्रायें[1]

(तालिका सं०-4)

तालों का नाम		तालों के चिन्ह	मात्राएं
1	चच्चत्पुट	SSIऽ	2+2+1+3=8
2	चाचपुट	SIIS	2+1+1+2=6
3	षट्पितापुत्रक	ऽISSIऽ	3+1+2+2+1+3=12
4	सम्पद्वेष्टिक	ऽSSSSऽ	3+2+2+2+3=12
5	उद्घट्ट	SSS	2+2+2=6
6	आदिताल	I	1
7	दर्पण	००S	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=3$
8	चर्चरी	००।⌣,००।⌣,००।⌣,००।⌣, ००।⌣,००।⌣,००।⌣,००।⌣	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}+=18$
9	सिंहलील	I०००I	$1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1=3\frac{1}{2}$
10	कन्दर्प	००ISS	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2+2=6$
11	सिंहविक्रम	SSSIऽISऽ	2+2+2+1+3+1+2+3=16
12	श्रीरंग*	IISISऽ	1+1+2+1+2+3=10
13	रतिलील	ISSI	1+2+2+1=6
14	रंगताल	००००S	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=4$
15	परिक्रम*	००ISS	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2+2=6$
16	प्रत्यंग	SSSII	2+2+2+1+1=8

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/श्लोक-39/पृष्ठ-28-29

17	गजलील	।।।।⌣	$1+1+1+1+\frac{1}{4}=4\frac{1}{4}$
18	त्रिभिन्न	।ऽऽ	1+2+3=6
19	वीरविक्रम	।००ऽ	$1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=4$
20	हंसलील	।।⌣	$1+1+\frac{1}{4}=2\frac{1}{4}$
21	वर्णभित्र	००।ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2=4$
22	राजचूड़ामणि	००।।।००ऽ।	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+1+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2+1=8$
23	रंगद्योतेन*	।।ऽऽऽ	1+1+2+2+3=9
24	राजताल	ऽऽ००ऽ।ऽ	$2+3+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2+1+3=12$
25	सिंहविक्रीडित	।।ऽऽ।ऽऽ।ऽ	1+1+3+2+1+2+3+1+3=17
26	वनमाली	००००।००ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=6$
27	चतुरस्त्र	ऽऽ।००ऽ	$2+2+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=8$
28	तिस्त्रवर्ण*	।००।ऽ	$1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2=5$
29	मिश्रवर्ण*	००००⌣००००⌣०००० ऽऽ००ऽऽ।ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}+3+2+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2+2+1+2=19\frac{3}{4}$
30	रंगप्रदीप	ऽऽ।ऽऽ	2+2+1+2+3=10
31	हंसनाद*	ऽऽ००	$2+3+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=6$
32	सिंहनाद	।ऽऽ।ऽ	1+2+2+1+2=8
33	मल्लिकामोद*	ऽऽ।।।।	2+2+1+1+1+1=8
34	शरभलील*	।००००	$1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1=4$
35	रंगाभरण*	ऽऽ।।ऽऽ	2+2+1+1+3+2=11
36	तुरंगलील	००	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1=2$
37	सिंहनन्दन*	ऽऽ।ऽ।ऽ००ऽ।ऽ।ऽ।।। निशब्द।।।।	2+2+1+3+1+2+$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}$+2+1+3+1+3 +1+1+1+निशब्द 1+1+1+1=29
38	जयश्री	ऽ।ऽ।ऽ	2+1+2+1+2=8
39	विजयनन्द	।।ऽऽऽ	1+1+2+2+2=8
40	प्रतिताल	।००	$1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=2$
41	मकरन्द	००।।।ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+1+1+2=6$
42	कीर्तिताल	ऽ।ऽऽ।ऽ	2+1+3+2+1+3=12
43	विजय*	ऽऽऽऽ	3+2+3+2=10

44	जयमंगल*	।।S।।S	1+1+2+1+1+2=8
45	राजविद्याधर	।S००	$1+2+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=4$
46	मण्ठ*	।।SSS	1+1+2+2+2=8
47	जयताल	।S।।००	$1+2+1+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=6$
48	कुडुक्क	००।।	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+1=3$
49	निःसारिके*	।।⌣	$1+1+\frac{1}{4}=2\frac{1}{4}$
50	क्रीड़ाताल	००⌣	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=1\frac{1}{4}$
51	त्रिभंगी*	।।SS।	1+1+2+2+1=7
52	कोकिलाप्रियताल	S।ऽ	2+1+3=6
53	श्रीकीर्ति	SS।।	2+2+1+1=6
54	बिंदुमालिके*	S।।S०	$2+1+1+2+\frac{1}{2}=6\frac{1}{2}$
55	समताल*	।।०००⌣	$1+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=3\frac{3}{4}$
56	नन्दन	००ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+3=4$
57	उदीक्षण	।।S	1+1+2=4
58	मट्टिका	S०ऽ	$2+\frac{1}{2}+3=5\frac{1}{2}$
59	वर्णमट्टिका*	०।०	$\frac{1}{2}+1+\frac{1}{2}=2$
60	अभिनंदन	।।००S	$1+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=5$
61	अंतरक्रीडा*	००⌣	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=1\frac{1}{4}$
62	मल्लताल*	।।००⌣	$1+1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=3\frac{1}{4}$
63	दीपक	००।।SS	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+1+2+2=7$
64	अनंग	।ऽ।।S	1+3+1+1+2=8
65	विषम	०००⌣०००⌣	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=4\frac{1}{2}$
66	नान्दीताल*	।०।S	$1+\frac{1}{2}+1+2=4\frac{1}{2}$
67	मुकुन्दक* ताल के दो लक्षण मत है	।०।S	$1+\frac{1}{2}+1+2=4\frac{1}{2}$
		।००००००।।।।	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+1+1+1=8$
68	कूड्डु	।।।।S	1+1+1+1+2=6
69	एकताल	०	$\frac{1}{2}$
70	पूर्ण कंकाल*	।।।।S।	1+1+1+1+2+1=7

71	खंड कंकाल*	००।	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1=2$
72	समकंकाल	ऽऽ।	2+2+1=5
73	विषम कंकाल	।ऽऽ	1+2+2=5
74	चतुरस्त्रताल	ऽ०००	$2+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=3\frac{1}{2}$
75	दोंबुली*	।।‿	$1+1+\frac{1}{4}=2\frac{1}{4}$
76	अभंग*	ऽ।ऽ॑	2+1+3=6
77	रायभंकाल	ऽ।ऽ००	$2+1+2+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=6$
78	लघुशेखर	।‿	$1+\frac{1}{4}=1\frac{1}{4}$
79	प्रतापशेखर*	००‿	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=1\frac{1}{2}$
80	जगझम्पा*	ऽ०००‿	$2+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=3\frac{3}{4}$
81	चतुमुख	।ऽ।ऽ॑	1+2+1+3=7
82	झम्प*	००।‿	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+\frac{1}{4}=2\frac{1}{4}$
83	प्रतिमण्ठ*	।ऽ।ऽऽऽ	1+2+1+2+2+2=10
84	तृतीय ताल	००‿	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=1\frac{1}{4}$
85	बसन्त*	००।ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2=4$
86	ललित	००।ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2=4$
87	रतिताल	।ऽ	1+2=3
88	करणताल	००००	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=2$
89	षट्ताल	००००००	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=3$
90	वर्द्धन*	००ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+2=3$
91	वर्णमठा*	। ।०००	$1+1\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=3\frac{1}{2}$
92	रायनारायण	००।ऽ।ऽ	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+2+1+2=7$
93	मदन	००ऽ॑	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+3=4$
94	पार्वती लोचन*	ऽऽऽ।ऽऽऽ०००	$2+2+2+1+2+2+2+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}=14\frac{1}{4}$
95	गारुगी*	००००‿	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+\frac{1}{4}=2\frac{1}{4}$
96	श्रीनन्दन	।ऽ।ऽ॑	1+2+1+3=7
97	लीला	०।ऽ॑	$\frac{1}{2}+1+3=4\frac{1}{2}$
98	विलोके*	।००ऽ॑	$1+\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+3=5$

99	ललितप्रिय*	।।ऽ।	1+1+2+1=5
100	रागवर्धन*	००।ऽ⌣	$\frac{1}{2}+\frac{1}{2}+1+3+\frac{1}{4}=5\frac{1}{4}$
101	उत्सव	ऽ।	3+1=4

*ताल की मात्रा संगीत मकरंद मे वर्णित लक्षण के अनुसार दी गयी है। अन्य संगीत ग्रन्थों मे यह मात्रा संख्या भिन्न-भिन्न प्राप्त होती है।

4:3 संगीत मकरंद के परवर्ती ग्रंथो में वर्णित तालों का अध्ययन

विद्वानों द्वारा पंडित नारद कृत संगीत मकरंद का काल 7वीं से 10 वीं शताब्दी के मध्य माना जाता है जिसका पूर्ण विवरण प्रथम अध्याय मे दिया जा चुका है इसलिए यहाँ संगीत मकरंद के परवर्ती ग्रन्थों मे 10वीं शताब्दी के बाद के ग्रन्थों का समावेश किया जा रहा है। जिसके माध्यम से ताल के विषय मे बताने का प्रयास किया जा रहा है।

4:3:1 सोमेश्वर कृत मानसोल्लास (अभिलाषितार्थचिन्तामणि**)-** मानसोल्लास के द्वितीत भाग तृतीय विशांति श्लोक 193 से 204 तक ताल के नाम व लक्षण का वर्णन प्राप्त होता है।[(1)]

न तालेन बिना गीतं न वाद्यं तालवर्जितम् ।।
न नृत्यं तालहीनं स्यादतस्तालोऽत्र कारणम् ।
गीतं वाद्यं तथा नृत्यं वितयं येन लभ्यते ।।
तेन ताल इति ख्यातः सोमेश्वरमहीभुजा । [(2)]

अर्थात्- न ताल के बिना गीत है न वाद्य और न ही नृत्य हो सकता है इसलिए ताल इनका कारक है क्योकि ताल से ही गीत, वाद्य, नृत्य को आधार प्राप्त होता है।

4:3:2 संगीत चूड़ामणि प्रताप चक्रवर्ती (जगदेकमल) संगीत चूड़ामणि के ताल प्रकरण मे एककोत्तरशत ताल के अंतर्गत श्लोक-65-80 तक 101 तालों के नाम तथा श्लोक 80 से 138 तक तालों के लक्षण दिये गए है जिसमे प्रथम पाँच मार्गी तथा शेष देशी तालों का वर्णन किया गया है। इस ग्रंथ मे नारद कृत संगीत मकरंद की भांति मार्गी ओर देशी तालों के भेद नहीं किए गए है।[(3)]

---

(1) मानसोल्लास/सोमेश्वर/द्वितीय भाग/तृतीय विशांति/श्लोक193-204/पृष्ठ-18-19
(2) पाण्डेय, डॉ० सुधांशु/ताल प्राण/पृष्ठ-4
(3) संगीत चूड़ामणि/प्रताप चक्रवर्ती (जगदेकमल)/तालप्रकरण/श्लोक-65-80/पृष्ठ-8

"तालशब्दस्य निष्पत्तिः प्रतिष्ठार्थो (र्थे) न धातुना।

गीतं वाद्यं च नृत्तं (त्यं) च भाति ताले प्रतिष्ठतः (तम्) ।।

ताल: कालस्य यन्मानं मापा- (मात्राजं) हि क्रियाकृतम्।[1]

अर्थात्- ताल शब्द की निष्पत्ति तल धातु मे घञ् प्रत्यय लगाने से प्राप्त होती है ताल मे गीत वाद्य, नृत्य को प्रतिष्ठित (व्यवस्थित रूप से सूत्र मे बंधा हुआ) कर आधार प्रदान करने वाला ताल ही है।

4:3:3 पार्श्वदेव कृत सङ्गीतसमयसार-संगीत समय सार के स्प्तत्धिकरणम् अध्याय अथ तालोद्देश: के श्लोक 24 से 39 तक तालों के नाम व श्लोक 44 से 60 तक तालों के लक्षण दिये गए है। जिनमें पाँच मार्गी तालें, देशी तालों के साथ कुल 101 तालों के नाम व लक्षण का उल्लेख प्राप्त होता है। चच्चतपुट, चाचपुट, षटपितापुत्रक, सम्पर्केष्टक, उदघट्ट, आदि ताल, दर्पण, चर्चरी, सिंहलील, कन्दर्प, सिंहविक्रम, श्री रंग, रतिलील, रंगताल, परिक्रम, प्रत्यंग गजलील, त्रिभिन्न, वीरविक्रम, हंसलील, वर्ण, राजचूड़ामणि, रंगोद्योत, राजताल, सिंहविक्रीड़ित, वनमाली, वर्णताल, रंगप्रदीपक, हंसनाद, सिंहनाद, मल्लिकामोद, भवेच्छर, शरभलील, रंगाभरण, तुरंगलील, सिंहनन्दन, जयश्री, विजयानन्द, प्रतिताल, द्वितीयक, मकरन्द, कीर्तिताल, विजय, जयमंगल, राजविद्याधर, मट्ट, जयताल, कुडुक्क, निस्सारूक, क्रीड़ा, त्रिभगि, केरलप्रिय, श्रीकीर्ति, बिन्दुमाली, समताल, नन्दन, उदीक्षण, मट्टिका, ढेकिका, वर्ण मट्टिका, अभिनन्द, नवक्रीड़ा, मल्लताल, दीपक, अनंगताल, विषम, नान्दी, मुकुन्दक, कन्दुक, एकताल, कडाल, चतुस्ताल डोम्बुली, अभंग, रायबंगताल, लघुशेखर, प्रतापशेखर, जगझम्प, चतुर्मुख, झम्पा, प्रतिमट्ट, तृतीयक, वसंत, ललित, रति, करणायति, षट्टताल, वर्धन, वर्णयति, राजनारायण, मदन, पार्वतीलोचन, गारूगि, श्रीनन्दन, जय, लीलाविलोकित, ललितप्रिय, जनकताल, लक्ष्मीश, रागवर्धन, उत्सव। संगीत समयसार ग्रंथ मे चार प्रकार के तालों का वर्णन प्राप्त होता है जिसमे चतुरश्र, त्रयश्र, मिश्र, खंड है । इस ग्रंथ मे ताल के भेद को जाति के नाम से संबोधित किया गया है। इस तथा इसमे भी नारद कृत संगीत मकरंद की भांति मार्गी व देशी तालों के भेद नहीं किए गए है।[2] 101तालों मे से 35 तालों के अंगों का वर्णन किया गया है, चच्चत्पुट, चाचपुट, उद्घट्ट, षटपितापुत्रक सम्पवेष्टाक, हेला, त्रिगता, नल्कुटा, नल्कुटी, खंजा, खन्जिका, अक्रीडिता यह बारह भंग है। त्र्यश्र, चतुरश्रा, चटुला, मिश्र एवं कुटिला, आक्षिप्तिका यह छ: उपभङ्ग कहलाते है, तथा शेष विभङ्ग है। [3]

---

(1) संगीत चूड़ामणि/प्रताप चक्रवर्ती (जगदेकमल)/ताल प्रकरण/श्लोक-43-44/पृष्ठ-6
(2) पार्श्वदेव/संगीत समयसार/स्प्तत्धिकरणम्/श्लोक-40-60/पृष्ठ-241-245
(3) पार्श्वदेव/संगीत समयसार/स्प्तत्धिकरणम्/श्लोक-44-46/पृष्ठ-245

4:3:4 पंडित शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर– संगीत रत्नाकर मे ताल का वर्णन पंचम अध्याय तालध्याय मे प्राप्त होता है जिसमे ताल को मार्गी व देशी दो वर्गो मे विभाजित किया गया है। कुल 120 तालों का वर्णन विस्तृत रूप से लक्षण सहित किया गया है सर्वप्रथम मार्गी तालों का वर्णन प्राप्त होता है।

चतुरश्रस्तथा त्र्यश्र इति तालो द्विधा मतः ॥

चच्चत्पुटचाचपुट इति नाम्नी तयोः क्रमात ।

यथाक्षरश्च द्विकलश्चतुष्कल इति त्रिधा ॥

ताल के दो भेद चतुरश्र और त्रयश्र माने गए है जिनके नाम क्रमश: चच्चत्पुट चाचपुट माने जाते है। यह तीन प्रकार यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल स्वरूप मे इस प्रकार है-

	च	**च्च**	**त्पु**	**ट:**
यथाक्षर	ऽ	ऽ	।	ऽ
द्विकल	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ
चतुष्कल	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ

	चा	**च**	**पु**	**ट:**
यथाक्षर	ऽ	।	।	ऽ
द्विकल	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	
चतुष्कल	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	

षटपितापुत्रकस्त्र्यश्रभेदः सोऽपि तथा त्रिधा।

यथाक्षरे विशेषोऽत्र प्लुतमाद्यन्तयोर्भवेत् ॥

षटपितापुत्रक के दो नाम उत्तरा और पंचपाणि है इसको त्रयश्र का भेद माना जाता है षटपितापुत्रक यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल स्वरूप मे इस प्रकार है।

	ष	**ट्पि**	**ता**	**पु**	**त्र**	**क:**
यथाक्षर	ऽ	।	ऽ	ऽ	।	ऽ
द्विकल	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ
चतुष्कल	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ

उद्घटटोऽपि त्र्यश्रभेदः स प्रस्तारे यथाक्षरः ।

उद्घट ताल को भी त्रयश्र का भेद माना जाता है, उद्घट ताल का यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल स्वरूप मे इस प्रकार है।

	उ	**द्घ**	**ट् टः**
यथाक्षर	ऽ	ऽ	ऽ
द्विकल	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ
चतुष्कल	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ

संपक्वेष्टाकोऽपि भेदः षपितापुत्रकस्य सः ॥

तद्वद्यथाक्षरः कार्यः प्लुतमाद्यन्तर्भवेत् ।

संपवेष्टाक ताल को षटपितापुत्रक का ही भेद माना जाता है संपवेष्टाक ताल का यथाक्षर, द्विकल, चतुष्कल स्वरूप मे इस प्रकार है।

	सं	**प**	**क्वे**	**ष्टा**	**कः**	
यथाक्षर	ऽे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽे	
द्विकल	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ	ऽ ऽ
चतुष्कल	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऽ ऽ [1]

संगीत रत्नाकर मे मार्गी व देशी तालों का वर्णन अलग अलग किया गया है मार्गी तालों के पश्चात देशी तालों का विस्तृत वर्णन लक्षण सहित किया गया है, जो इस प्रकार से है- आदितालो, द्वितीयश्च, तृतीयोश्ऽथ, चतुर्थकः, पंचमो, निःशडक,लीलो, दर्पणः, सिंहविक्रमः, रतिलीलः, सिंहलीलः, कन्दर्पो, वीरविक्रमः, रंग, श्रीरंग,चच्चर्यौ, प्रत्यंगो, यतिलग्नकः, गजलीलो, हंसलीलो, वर्णभिन्नस्त्रिभिन्नकः, राजचूणामणी, रंगोद्योतो, रंगप्रदीपकः, राजतालो, वर्णतालः, सिंहविक्रीडितो, जयः, वनमाली, हंसनादः, सिंहनादः, कुडुक्ककः, तुरंगलीलः, शरभलीलः, सिंहनन्दनः, त्रिभङि्ःगरङ्ःगाभरणौ, मण्ठकः, कोकिलाप्रियः, निःसारूको, राजविद्याधर, जयमंगलः, मल्लिकामोद, विजयानन्दौ, क्रीडा, जयश्रियौ, मकरन्दः, कीर्तितालः, श्रीकीर्तिः, प्रतितालकः, विजयो, बिन्दुमाली, समनन्दन, मण्ठिकाः, दीपको, ढेङ्ःकी, विषमो, वर्णमण्ठिका, अभिनन्दो, नान्दी, मल्लक, कन्दुकाः, एकताली, कुमुद, श्चतुस्ताली, डोम्बुली, अभडो, रायवंकोलो, वसन्तो, लघुशेखरः, प्रतापशेखरो, झम्पा, गजझम्पश्चतुर्मुखः, मदनः, प्रतिमण्ठ, पार्वतीलोचनो, रतिः, लीलाकरणयत्याख्यौ, ललितो, गारुगिस्तथा,

---

(1) शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर/पंचम अध्याय/तालाध्याय/मार्गताल तत्व लक्षण प्रकरण/पृष्ठ-11-19

राजनारायणा, लक्ष्मीषो, ललितप्रियः, श्रीनन्द, जनको, वर्धनो, रागवर्धनः, षट्ताल, चान्तारक्रीडा, हंसोत्सव विलोकिताः, गजो, वर्णयतिः, सिंहः, करणः, सारसस्तथा, चण्डताल, चन्द्रकलालयस्कन्दोश्ऽ, ड्डतालिकाः, घत्ता, द्वन्द्वमुकुन्दौ, कुविन्द, कलध्वनिः, गौरी, सरस्वती, कण्ठाभरणो, भग्नसंज्ञकः, तालो राजमृगांक, राजमार्तण्ड, संज्ञकः [1]

4:3:5 सुधाकलश कृत सङ्गीतोपनिषत्सारोद्धार

"गीतं वाद्यं तथा नृत्यं तालवर्ज न शोभते।
तालाभावान मेलः स्यादमेलादव्यवस्थितिः॥
न रङ्गमव्यवस्थातो विना रङ्ग कुतो लयः ।
लयं बिना न सौख्यं स्यात् तन्मूलं ताल उच्यते ॥ [2]

अर्थात्- गीत वाद्य और नृत्य की शोभा ताल के बिना नहीं है ,सुधाकलश द्वारा ताल रहित संगीत (गीत, वाद्य, नृत्य) निरर्थक है। सङ्गीतोपनिषत्सारोद्धार ग्रंथ के द्वितीयाध्याय के अथ ताल के अंतर्गत श्लोक संख्या 43 के पश्चात तालों विशेष वर्णन जिसमे 73 तालों का वर्णन किया गया है जिसमे तालों के अंग के साथ उनके बोल भी दिये गए है।[3] कई समान मात्रा वाली तालों को बोलो के माध्यम से अलग अलग भी देखा जा सकता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है, कि सङ्गीतोपनिषत्सारोद्धार ग्रंथ के द्वितीयाध्याय ताल को समर्पित है।

4:3:6 पुंडरिक विट्ठल कृत नृत्य निर्णय- श्री पुण्डरीक विठ्ल कृत 'नर्तन-निर्णय' में पाँच मार्गी तालों व छियासी देशी तालों कुल 90 तालों का लक्षण सहित वर्णन प्राप्त होता है–चच्चत्पुट, चाचपुट, उद्घट, षट्पितापुत्रक, सम्पर्केष्टक, आदि ताल, बह्म ताल, अर्जुन, यतिशेखर, द्वितीय, आड़ाताल, सन्निताल, समभ्रम, सम, शरभराजा, चित्र, क्रीड़ा, कम्बुक, चच्चरी, मल्लिकामोद, जगद्विजय, विभ्रम, विचित्र, जड़वत, राज वल्लभ, नागराजा, एक ताली, तृतीय, प्रतिमण्ठ, रूपक, कुण्डनाचि, महासन्नि, झम्पा, हेमात पत्रक, पुरन्दर, भ्रमर, मण्डना, पंकज, त्रिगुण, सुन्दर, विश्वसम्भव, चन्द्रका, गारुगि, गजलीला, चण्डताल, रति, यतिमध्य, कंक, युगराज, धनन्जय, मयूर, मृगराज, विकंक, मकरभ्रम, अतिरुप, चन्द्रकला, रंगोद्योत, वर्ण, वीरविक्रम, सिंह, राजचूड़ामणि, रंग, श्रीरंग, करुण, ध्यलील, पंचम, जगद्रंजक,मण्ठ, लक्ष्मी, कल्याण, कुम्भका, त्रिपुट,

---

(1) शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर/पंचम अध्याय/तालाध्याय/देशीताल प्रकरण/पृष्ठ-154-192
(2) सुधाकलश/सङ्गीतोपनिषत्सारोद्धार/द्वितीय अध्याय/श्लोक5-6/पृष्ठ-15
(3) सुधाकलश/सङ्गीतोपनिषत्सारोद्धार/ द्वितीय अध्याय/पृष्ठ-23-51

रायभयंकर, गजताल, चूड़ामणि, रिपुभयंकर, लघुशेखर, रच्च, सिंहनन्दन, सिंहलील, हसलील, ढेंकी, शरभलीलक, कंकाल, प्रतिताल, प्रत्यंग, विजय, जय, पृथ्वीकुण्डल, त्रिभंगि, सिंहविक्रम।[1]

4:4 संगीत मकरंद में वर्णित ताल प्रबंध का अध्ययन

ताल प्रबंध ताल से सम्बंधित एक नवीन विषय है जिसका वर्णन नारद द्वारा संगीत मकरंद मे किया गया है । दो या दो से अधिक तालों से युक्त ताल को ताल प्रबंध कहा गया है। नारद द्वारा दस प्रकार के ताल प्रबंध का वर्णन नृत्याध्याय के तृतीय पाद में किया गया है। जिसमे से केवल सात प्रबंध स्पष्ट रूप से समझने के योग्य है और अन्य तीन इतने स्पष्ट नही है। वहीं शुरुआत में नारद द्वारा नंदिकेश्वर के अदंबरा, शब्दामबर और रेखा ताल का उल्लेख किया गया है। आरंभिक श्लोक मे आदिताल के प्रस्तार का वर्णन का आभास दिया है, [2]तथा ताल के दस प्रबंधों के नाम दिए गए है, जो प्रबंध तालों का निर्माण करते है।

4:4:1 त्रिभंगी-त्रिभंगी प्रबंध में निम्नलिखित तीन ताल जो इस प्रकार है-राजताल, वनमाली ताल और रंगद्युत ताल शामिल है।

4:4:2 चतुर्मुख-चतुर्मुख प्रबंध को सुनने मात्र से शत्रुओं का नाश होता है। इस प्रबंध में निम्नलिखित चार ताल जो इस प्रकार है-एकताल, कंकला ताल, चतुरस्त्र ताल, और दोंबुली ताल शामिल है।

4:4:3 पंचताल प्रबंध-पंचताल प्रबंध में सफलता और ख़ुशी देने की शक्ति है। इस प्रबंध में निम्नलिखित पाँच ताल जो इस प्रकार है-विजय, जय, आनंद, जयश्री और जयमंगल शामिल है।

4:4:4 षट ताल प्रबंध-इस प्रबंध में निम्नलिखित छ: ताल जो इस प्रकार है-चच्चत्पुट, चाचपुट, षट्पितापुत्रक, प्रत्यंग, गजलीला, शतताल शामिल है।

4:4:5 मार्तण्ड जयद- मार्तण्ड जयद प्रबंध में निम्नलिखित सात ताल जो इस प्रकार है- मदन, उत्सव, लक्ष्मीश, क्रीड़ा, कीर्ति, रति और सिंहलीला शामिल है।

4:4:6 अष्टमंगल-अष्टमंगल प्रबन्ध प्रतिकार ग्रहों के प्रभाव से छुटकारा दिलाता है। इस प्रबंध में निम्नलिखित आठ ताल जो इस प्रकार है, कंदर्प, बिंदुमाली, समताल, नंदन, राजविद्याधर, झम्पा, विषम और कंदुका शामिल है।

---

(1) विट्ठल पुंडरिक विरचित/ नृत्य-निर्णय/अनुवादक आर० सत्यनारायन/पृष्ठ-120-151
(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-6-13 पृष्ठ-39

4:4:7 नवताल प्रबंध-नवताल प्रबंध मे निम्नलिखित नौ ताल शामिल है, जो इस प्रकार है-उद्धट, सिंहनाद, अभंग, वीरविक्रम, शरभलीला, सिंहविक्रिदित, प्रताप शेखर, सिंहविक्रम, और राय नारायण यह नवताल प्रबंध का निर्माण करते है।

4:4:8 दशरूप प्रबंध-दशरूप प्रबन्ध की तालो के श्रवण मात्र से ही प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा वश मे हो जाती है। इस प्रबंध में निम्नलिखित दस ताल जो इस प्रकार है-अभिनंदन, क्रीड़ा, मल्लताल, दोंबुली, कुदुक्का, प्रतिमठ, मकरंद, चर्चरी, परिक्रम और हंसनाद शामिल है।

4:4:9 एकादशताल प्रबन्ध-एकादशताल प्रबंध में निम्नलिखित ग्यारह ताल जो इस प्रकार है- ताल नंदी, तृतीयक, लघु शेखर, वर्णमत्ता, चर्चरी, वर्णताल, द्वितीयक, उत्सव, और मदन शामिल है।

4:4:10 द्वादशताल प्रबन्ध- द्वादशताल प्रबन्ध प्रबंध में निम्नलिखित बारह तालों की प्रशंसा की गयी है जो इस प्रकार है- वनमाली, राजचूड़ामणि, वर्णताल, प्रदीपक, रंगाभरण, उद्घाट, रति, कीर्ति, नन्दन, विक्रम, लक्ष्मीश,और उत्सव।

इस प्रकार के ताल प्रबन्धों का उल्लेख सर्वप्रथम संगीत मकरंद मे ही प्राप्त होता है। तत्पश्चात कुछ प्रबंध जैसे तालर्णव, पंचतालश्वर ताल प्रबंधों का उल्लेख 'संगीत रत्नाकर' में प्राप्त होता है। कर्नाटक संगीत में अनेक तालों में निबद्ध रचनाओं को सुलादी कहा जाता है। इन दस ताल प्रबंधों का प्रयोग संगीत के गायन वादन के साथ-साथ नृत्य के लिए भी किया जाता है। इन दश प्रबन्ध को सुसंस्कृत यौगिक तालों पर आधारित परवर्ती काल की उत्पत्ति माना जा सकता है। नारद द्वारा भी इन ताल प्रबन्धों की मात्रा और गण का वर्णन किया गया है, दस प्रबन्ध बिखरे हुए है परंतु तीसरे, चौथे और पांचवें प्रबंध का वर्णन श्लोक संख्या14 से 18 पृष्ठ 40 मे प्राप्त होता है। नारद के अनुसार इन दस ताल प्रबन्ध का वादन व श्रवण मानव को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता दिलाएगा।

4:5 संगीत मकरंद में वर्णित ताल के दश प्राणों का अध्ययन

जीवन का आधार प्राण है जो शरीर, मन और चेतना को सदैव गतिशील रखता है। अथर्ववेद के प्रथम मंत्र मे प्राण की विशिष्ठता का वर्णन करते हुए यह कहा गया है कि-

प्राणाय नमो यस्य सर्वभिदं वशे

यो भूत: सर्वस्येश्वरो यस्मिन्त्सर्व प्रतिष्ठितम् [(1)]

अर्थात् उस प्राण को मै नमस्कार करता हूँ जिसके आधीन सम्पूर्ण जगत है तथा को समस्त प्राणियों का ईश्वर है और जिसमे यह सब प्रतिष्ठित है। शरीर के आधार प्राण का विस्तृत रूप अथर्ववेद के मंत्रों मे प्राप्त होता है। उपनिषदों मे प्राण कि तुलना ब्रह्म देव से की गयी है। शरीर के कण कण मे प्राण विधमान है, प्राण शक्ति प्रत्येक क्षण कार्यरत रहती है भले ही शरीर की ज्ञानेन्द्रियन व इंद्रियाँ विश्राम कर ले सम्पूर्ण ब्रह्मांड मे प्राण सर्वाधिक शक्तिशाली जीवन तत्व है प्रश्नोपनिषद के श्लोक मे यह कहा गया है कि-

"प्राणो वाव ज्येष्ठश्च श्रेष्ठश्च

प्राणस्येदं वशे सर्व त्रिदिवि यत्प्रतिष्ठितम्

मातेव पुत्रान् रक्षस्व श्रीश्च प्रज्ञां च विधेहि न इति।"[(2)]

अर्थात्- स्वर्गलोक मे जो कुछ स्थित है, वह सब प्राण के ही आधीन है। जिस प्रकार माता अपने पुत्र की रक्षा करती है उसी प्रकार हमारी रक्षा करें तथा हमें श्री और बुद्धि प्रदान करें

भारतीय संगीत का मुख्य आधार ताल है जिसे संगीत का प्राण माना जाता है। जिस प्रकार शरीर का अस्तित्व प्राणों के बिना हो नहीं सकता उसी प्रकार संगीत का भी अस्तित्व ताल के बिना अकल्पनीय है।

भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र मे काल, मार्ग, क्रिया,काल अवयव (अंग), पाणि (ग्रह) तालभेद (जाति) कला और यति का उल्लेख प्राप्त होता है, परन्तु नाट्यशास्त्र मे प्रस्तार का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है। भरतमुनि द्वारा नाट्यशास्त्र मे ताल के अनिवार्य तत्वों को घटकों के रूप मे स्वीकार करते हुए उल्लेख किया गया है।

ताल के मुख्य तत्वों को प्राणों की संज्ञा सर्वप्रथम नारद कृत संगीत मकरंद ग्रंथ मे दी गयी है । नारद कृत संगीत मकरंद के द्वितीय अध्याय नृत्यध्याय के तृतीय पाद मे दश ताल प्रबंध, लघु सुलादि व अंग तालों के पश्चात ताल शब्द निष्पत्ति के अंतर्गत श्लोक संख्या 49 से 100 तक ताल के दस प्राण का वर्णन किया है।

---

(1) अथर्ववेद/ग्यारवा कांड/चतुर्थ अध्याय/ श्लोक-1

(2) प्रश्नोपनिषद/प्रश्न-2/श्लोक-13/ पृष्ठ-34

देवर्षि नारद का इस विषय मे यह कहना है कि ताल सांसारिक और आध्यात्मिक रूप से शिव और शक्ति दोनों का प्रतिनिधित्व करता है।

4:5:1 काल

कालमार्गक्रियाङ्गानिगृहजातिकलालयाः।

यतिप्रस्तारकंचैवतालप्राणादशस्मृताः ॥[1]

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का पहला व आवश्यक प्राण है जिसे ताल रचना के लिए अनिवार्य तत्व माना जाता है, काल समय को इंगित करता है। ताल समय के उपायों या इकाइयों पर आधारित है, काल की सबसे छोटी इकाई 'क्षण' कहलाती है, जो सौ कमल के पत्तों को एक के ऊपर एक रख कर सूई से भेदने मे लगने वाला समय एक क्षण कहलाता है।

लवःक्षणैरष्टभिःस्यात्काष्ठाचाष्टलवात्मिका।

अष्टकाष्ठानिमेषःस्यानिमेषैरष्टभिःकला ॥

ताभ्यांचैवचतुर्भागचतुर्भानामनुद्रुतः।

अनुद्वताभ्यांबिन्दुश्चबिन्दुभ्यांतुलघुर्भवेत् ॥

लघुद्वन्द्वंगुरुश्चैवत्रिलघुलुतमुच्यते॥ [2]

8 क्षण= 1 लव	8 निमेश= 1 कला	2 बिन्दु=1 लघु
8 लव = 1 काष्ठ	2 कला= 1 अणुद्रुत	2 लघु=1 गुरु
8 काष्ठ= 1 निमेश	2 अणुद्रुत= 1 बिन्दु	3 लघु=1 प्लुत

भरतमुनि काल मे इस सारणी का पालन नहीं करते है जो सामान्य समय को दर्शाता है। उनके अनुसार, एक मात्रा पाँच छोटे अक्षरों के उच्चारण में लगने वाले समय के बराबर होती है, लघु एक मात्रा के बराबर है।

4:5:2 मार्ग

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का दूसरा प्राण है। काल के पश्चात, नारद द्वारा संगीत मकरंद मे मार्ग के बारे में बताया गया है। 'मार्ग' का शाब्दिक अर्थ है मार्ग, रास्ता, विधि। यहां इसे एक काल में समय इकाइयों की गिनती को नियंत्रित करने के तरीके के रूप में लागू किया जाता है। एक समय माप जिसमें दो

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-51/पृष्ठ-43
(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-53-54/पृष्ठ-43

मात्राएं अपनी सामान्य अवस्था में होती है। ताल की एक मात्रा को पाँच छोटे अक्षरों के उच्चारण में लगने वाले समय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह मात्राएँ ताल-लयबद्ध चक्र की गति को नियंत्रित करती है।

दक्षिणोवार्तिकश्चैवतथाचित्रविचित्रकः ।

तथाचित्रतरस्तुस्यादतिचित्रतरो मतः॥[1]

आमतौर पर, मार्ग तीन प्रकार माने गए है शारंगदेव द्वारा एक और मार्ग-नामित ध्रुव को जोड़ा गया है जिसका वर्णन संगीत मकरंद मे नहीं प्राप्त होता है। सभी लेखकों द्वारा स्वीकृत तीन मुख्य मार्ग चित्र, वर्तिका और दक्षिणा है। नारद द्वारा छह मार्गो का उल्लेख किया है। वे इस प्रकार है:

दक्षिण: यह सबसे धीमा मार्ग है जिसमें आठ मात्राओं की एक कला शामिल है।

वार्तिक: इस मार्ग में एक काल में चार मात्राएँ है और यह मध्यम गति की है।

चित्र: चित्र में कला है जिसमें दो मात्राएं शामिल है जो तेज गति है।

नारद तीन और मार्ग जोड़ते है, प्रत्येक पिछले वाले की तुलना में दोगुनी गति का है।

षडवःकथितोमार्गस्तस्यरूपंनिरूप्यते।

एतदेवनारदस्यमतमिष्टंयथाक्रमम् ॥

अष्टमात्राकलाज्ञेयामार्गेदक्षिणसंज्ञके ।

वार्तिकस्यतुचतुर्मात्राकलाचित्राद्विमात्रिका ॥

द्रुताचित्रतरेतस्यालघुश्चित्रतरोमतः ।

अतिचित्रतरोमार्गकलाश्चद्रुतसंज्ञिकः ॥[2]

चित्रतर: इसमें एक काल में एक ही मात्रा होती है।

अतिचित्रतर: इसमें एक मात्रा या एक द्रुत के आधे हिस्से का एक काल होता है।

अतिचित्रतम: केवल अनुद्रुत से युक्त ताल की सबसे तेज गति: एक मात्रा का एक चौथाई।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-56/पृष्ठ-44

(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-57-59/पृष्ठ-44

ध्यान देने योग्य बात यह है कि नारद द्वारा मार्गी शब्द का उल्लेख नहीं किया, जबकि वे पांच मार्गी तालों का वर्णन करते हुए उनके भौतिकीकरण विकास इत्यादि की चर्चा की है। वह मार्गी तालों में प्रयुक्त होने वाली मात्रा का वर्णन करते हुए, ताल की क्रियाओं को स्पष्ट करते हुए, मार्गी का उपयोग किया है। मात्रा को इस प्रकार परिभाषित किया गया है।

लध्याक्षराणां पञ्चानां मानमुच्चारणे हि यत्।

तत् परिमाणं परिशेयं मार्गस्तालैस्ततो बुधैः॥[1]

यह पद क्रिया के वर्णन से पहले आता है – जो ताल के दस प्राणों में से एक है काल (समय) में नारद ने मात्रा के स्थान पर लघु का नाम लिया है, इसके अलावा, 'काल' सामान्य समय को घंटे और प्रहर आदि बनाने के लिए उपयोग किया जाता है, जो संगीत में ताल के समय माप पर लागू नहीं होते है।

4:5:3 क्रिया

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का तीसरा प्राण है। इसका अर्थ है 'काम', काम करना, क्रिया और (व्याकरण मे प्रयुक्त होने वाली क्रिया)। लेकिन ताल में, क्रिया शब्द का प्रयोग ताल की समय इकाइयों को हाथों से रखने के लिए प्रयुक्त कार्यों के लिए किया जाता है। विशिष्ट समय इकाइयाँ- ज्यादातर मात्राएँ हाथों की मापी हुई चाल या ताली द्वारा दर्शायी जाती है। मार्गी और देशी ताल दोनों में आठ क्रिया है। क्रियाएँ दो प्रकार की है-निशब्द और सशब्द क्रिया

मार्गी ताल की सशब्द क्रियाएँ: नारद द्वारा संगीत मकरंद मे ताल, शाम्य, द्रुत, सन्निपात यह शब्द युक्त चार प्रकार की क्रियाओं का वर्णन किया गया है। यह सशब्द क्रियाएँ ध्वनियुक्त ताल है और इन्हें पात कला के नाम से भी जाना जाता है।

तस्यहस्तनिपातस्तुशम्यतालस्तुवामतः ।

हस्तयोरुभयोर्घातौसंनिपातद्रुतौस्मृतौ ॥[2]

निशब्द क्रिया: आवाप, निष्क्राम, विक्षेप और प्रवेशक, इन्हें कला के रूप में जाना जाता है, जबकि सशब्द क्रिया हथेलियों, ताली, उंगलियों को थपथपाने आदि के साथ ध्वनि उत्पन्न करती है। निशब्द क्रिया ध्वनि उत्पन्न

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-60/पृष्ठ-44
(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-66/पृष्ठ-44

किये बिना क्रियाएं है; हाथों की गति, अंगुलियों से संबंधित हावभाव, उन्हें अंदर की ओर खींचना और फैलाना आदि।

सर्वाङ्गुलिसमाक्षेपऑपादइतिकीर्तितः ।

निष्कामोऽथगतिस्तस्याअङ्गुलीनांप्रसारणम् ॥

तस्यदक्षिणतःकालोविक्षेपइतिकथ्यते।

विवर्णनं च हस्तस्यप्रवेशोऽधोमुखस्य च॥[1]

आवाप-दाहिने हाथ की हथेली को व्योम की ओर रखते हुए संकुचित करना आवाप क्रिया कहलाती है।

निष्क्राम-हाथ की हथेली को नीचे की तरफ रखते हुए उँगलियों का गति मे रहना निष्क्राम क्रिया कहलाती है।

विक्षेप- खुले हुए हाथ से दक्षिण की ओर विस्तार करना विक्षेप क्रिया कहलाता है।

प्रवेश-बायीं ओर हाथ को लाते हुए उँगलियों को सिकोड़ना प्रवेश क्रिया कहलाती है।

देशीयोग्यं (ग्यान्) प्रवक्ष्यामिव्यापारान्ध्रुवकादिकान् ।

ध्रुवकासर्पिणीकृष्यापद्मिनी च विसर्पिका ॥

विक्षिसाख्यापताकाख्यामातृकात्वरिताष्टमी।

अमात्राणि (पि)विज्ञेयाकथितंनारदेन च॥ [2]

देशी क्रियाएँ आठ प्रकार की होती है। ध्रुवका नाम की पहली क्रिया ध्वनि सहित सशब्द क्रिया है जबकि अन्य ध्वनि रहित है। जो इस प्रकार से है- सर्पिणी बायीं दिशा की ओर जाने वाली, कृष्णा दाहिनी दिशा मे जाने वाली, पद्मिनी नीचे की दिशा मे जाने वाली, विसर्जिका बाहर की दिशा मे जाने वाली, विशिप्ता समिटी हुयी, पताका ऊपर की ओर जाने वाली और त्वरित (पतिता) हाथ को गिराने की दिशा मे जाने वाली। ध्रुवका, पताका, सर्पिणी, चार मात्रा वाली कला वार्तिक मार्ग मे प्रयुक्त होती है। ध्रुवका और पतिता का प्रयोग चित्र मार्ग मे किया जाता है। इन देशी क्रियाओं को मात्रा कहा जाता है।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-64-65/पृष्ठ-45

(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-68-69/पृष्ठ-45

4:5:4 अंग

अनुद्रुतोद्रुतश्चैवलघुर्मुरुस्ततःपरम् ।

प्लुतश्चेतिक्रमेणैवतालाङ्गानि च पञ्चधा ॥

द्रुतस्यदेवताशम्भुलंघोश्चाद्रिपतेःसुता।

गौरी च श्रीश्चापिगुरोःप्लुतेब्रह्मादयस्त्रयः ॥[1]

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का चौथा प्राण है। नारद के अनुसार अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत पाँच तालांग है। अंग का अर्थ है हिस्सा व शरीर के अंग इत्यादि से है परंतु यहाँ अंग ताल से संबंधित है, क्योंकि ताल एक लयबद्ध चक्र बनाने वाले भागों के रूप में है। ताल या लयबद्ध संरचना विभिन्न समय इकाइयों द्वारा तैयार की जाती है, इन समय इकाइयों को अंग कहा जाता है। नारद द्वारा अनुद्रुत को छोड़कर इन सभी अंगो के अधिकारी देवताओं का नाम लेते है। द्रुत के देवता शंभू है। लघु अद्रीपति की पुत्री है, अर्थात् पार्वती, गौरी और श्री दोनों ही गुरु के देवता है। त्रिदेव-ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर, प्लूत के देवता है। अनुद्रुत ताल इकाइयों में सबसे छोटी इकाई है। यह एक मात्रा का केवल 1/4 वाँ भाग होता है, आधा मात्रा को द्रुत कहा जाता है, एक मात्रा में दो द्रुत होते है और चार अनुद्रुत। दो मात्राएँ या लघु एक गुरु बनाते है और तीन मात्राएँ एक प्लुत बनाती है। इन पांच इकाइयों में प्रत्येक के चार समानार्थक शब्द है-

अनुद्रुतमर्धचन्द्रंव्यञ्जनंचारुनासिकम् ॥

अव्यक्तंचेतिपश्चैतेपर्यायाख्यमनुद्रुते ।

अर्धमात्रद्रुतंव्योमवलयंबिन्दुकेद्रुतम् ॥

लघुनियामकंइखमात्रतालरसंतथा।

द्विमानं च कलावक्रदीर्घ च गुरुकीर्तनम् ॥

प्लुतत्रयंत्रिमात्रं च दीप्तंतालत्रयंतथा ।

अनुद्रुतखरूपं च तद्भालेन्दुकलात्मकम् ॥

द्रुतस्तुवलयाकारोलघुरूवंशराकृतिः।

गुरुर्वक्रधनुर्जेयंप्लुतस्यशिखरोगुरुः ॥

पञ्चाङ्गानांस्वरूपादिकथितंनारदेन च ।[2]

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-74-75/पृष्ठ-45

(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-96-100/पृष्ठ-47

1: अणुद्रुत- अर्धचंद्र, व्यंजनम, चारु नासिकम, अव्यक्तम

2: द्रुत- अर्धमात्रम, व्योमम, वलयम, बिंदु

3: लघु- व्यापकम, ह्रश्वम, मात्रा, सरलम

4: गुरु- द्वि मात्रम, वक्रम, दीर्घम, कला

5: प्लुत- त्रयम्, त्रिमात्रम, दीपतम, समोद्भवम

अंगों को इन संकेतों या प्रतीकों द्वारा दर्शाए जाता है, जिसका विवरण नृत्याध्याय के तृतीय पाद के अंत में प्राप्त होता है।

अनुद्रुत-	‿	¼ मात्रा
द्रुत	0	½ मात्रा
लघु	I	1 मात्रा
गुरु	S	2 मात्रा
प्लूत	S	3 मात्रा[1]

4:5:5 ग्रह

ग्रहास्त्रिधासमानीतास्तथानागतइत्यपि ।

तल्लक्षणं च वक्ष्यामिनारदोमुनिपुङ्गवः ॥

निकोतीतेत्वतीतस्यतालातीतेवनागतः ।

समःसमग्रहःप्रोक्तस्तालज्ञैःपूर्वसूरिभिः ॥[2]

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का पाँचवाँ प्राण है। ग्रह शब्द का अर्थ है पकड़ना, ग्रहण करना' या शुरू करना। ताल में, ग्रह एक गीत के अनुक्रम में ताल के शुरुआती बिंदु को इंगित करता है, आम तौर पर, यह सर्वविदित है कि ताल या ताल की मात्रा (तबला पर) एक गीत के एक विशिष्ट पूर्व-निर्धारित बिंदु से शुरू होती है। ताल, या तो गीत से शुरू होता है या गीत के शुरू होने से पहले या बाद में। इन्हें ग्रह कहा जाता है, ग्रह के तीन प्रकार होते है।

सम ग्रह: गीत और ताल एक साथ शुरू होते है। गीत और ताल का प्रारंभिक बिंदु मेल खाता है, फिर वह सम ग्रह कहलाता है।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-74-75/पृष्ठ-45

(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-76-77/पृष्ठ-45

नीता या अतित: अतित का अर्थ है अतीत जब किसी गीत का प्रारंभिक बिंदु समाप्त हो जाता है और कुछ विराम के बाद ताल का आरंभ किया जाता है, तो उसे अतित या नीता कहा जाता है यह नाम पंडित नारद द्वारा संगीत मकरंद मे प्राप्त होता है।

अनागत ग्रह: अनागत का अर्थ है नहीं पहुंचा। जब ताल गीत से पहले होता है तो उसे अनागत कहा जाता है। बाद के दो ग्रह लय की सुंदरता को जोड़ते है।

4:5:6 जाति

चतुरस्रस्तिसमिपस्तालंखंखाभिधेतथा (?)।

चतुर्विधोभवेत्तालस्तत्खरूपंनिरूप्यते ॥

तत्रचचत्पुटःप्रोक्तश्चतुरस्रोमनीषिभिः ।

तथाचाचुपुटस्तिस्त्रस्तथाभेदाभवन्ति च ॥

गुरुत्रयंसमारभ्यद्विगुणंद्विगुणंक्रमात् ।

एवंपूर्वव्यतीतेतुखं(?)षड्विधकल्पना ॥ [1]

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का छठा प्राण है। सामान्य बोलचाल की भाषा में जाति, वर्ग या प्रकार का संकेत देती है। ताल को भी मात्रा की संख्या-विषम या सम और विषम और सम संख्या दोनों के मिश्रण के अनुसार जातियों में वर्गीकृत किया गया है। हमारे लेखक नारद एक और जाति-खंड जाति जोड़ते है, जिसमें कई विभाजन होते है, जो बड़ी समय इकाइयों, यानी गुरु और प्लूत की जगह कई लघु द्वारा भेजे जाते है। नारद के अनुसार चार जातियां है।

त्रयश्र : इसमें विषम मात्राएं होती है, कलाओं की संख्या (काल= दो मात्रा) त्रयश्र जाति ताल के मूल में तीन कलाएँ है और प्रारंभिक अवस्था और प्रत्येक आगे की संख्या को दो से गुणा करके छियानबे गुरुओं तक विस्तारित किया जा सकता है।

। 3।6।12।24।48।96

गुरु त्रयं सुमम्यगुण द्वि द्विगुण क्रमात् [2]

चतुरश्र जाति: जैसा कि नाम से पता चलता है, इस जाति में सम संख्याबद्ध मात्राओं के जोड़े है, यानी, चार कला या गुरु (आठमात्र)। इसे इसी तरह 128 गुरुओं तक बढ़ाया जा सकता है।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-78-80/पृष्ठ-45-46

(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-81/पृष्ठ-47

4।8।16।32।64।128।

गुरु द्वयं समारम्य द्विगुणं द्विगुणं क्रमात (1)

मिश्र जाति: जब विषम और सम संख्या वाले तालों को विभिन्न तरीकों से संयोजित किया जाता है, तो मिश्र जाति ताल का निर्माण होता है।

तदा<u>लै</u>श्चतुरस्र जातिनां खण्डाः विभागा भविष्यन्ति

तत्र <u>तदा</u> खण्डार्था ताला इति ख्याता जायन्ते।(2)

खंड जाति: जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है कि खंड जाति ताल कई विभाजनों से मिलकर बनता है, और कई लघु से युक्त ताल को खंड जाति कहा जाता है। खंड जाति छोटे विभाजन के लिये उपयुक्त माना जाता है, यहाँ लघु या एकल मात्रा खंड जाति ताल का प्रतिनिधित्व करती है। नारद द्वारा दी गई खंड जाति ताल की परिभाषा इस प्रकार है। यहा 'तदा लैं:, लैःका प्रयोग लघु के लिए किया गया है।

4:5:7 कला

कालान्तरालवृत्तिर्याम्लकविल्व "वत् ।

कथितोनारदेनैवकाललक्षणवेदिना ॥

धत्तेमध्याधंकालस्यमध्यकालखभावतः ।

विलम्बोदीर्घकालस्यत्रिकालस्त्वितिनिश्चितः ॥ (3)

नारद कृत संगीत मकरंद मे कला का सातवाँ स्थान है। नारद के अनुसार काल का अंतराल व्रत्ति है जिसे आम्लक-बिल्व पत्र के समान माना जाता है। यह दो मात्राओं या लघु से युक्त गुरु के बराबर होता है। लेकिन यह अपने इकाई और गिनती के मामले में लगातार स्थिर नहीं है। मार्ग के अनुसार, यह अपनी मात्राओं की गिनती बदलता है। दक्षिणा, वर्तिका और चित्रा मार्ग में क्रमश: आठ, चार, दो मात्राएँ होती है।

4:5:8 लय

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार ताल के दश प्राण मे लय का आठवाँ स्थान है। जिस प्रकार से शरीर मे नाड़ी का स्थान सर्वोपरि है उसी प्रकार से संगीत मे लय का स्थान सर्वोपरि है। लय ताल की चाल या गति को कहा जाता है। लय दो मात्राओं के बीच का अंतराल लयबद्ध चक्र की गति का संचालन कारक कहलाता है।

---

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-82/पृष्ठ-47
(2) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/पृष्ठ-46
(3) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-84-85/पृष्ठ-46

लय के तीन प्रकार है, साधारण भाषा या क्रिया में प्रयुक्त होने वाली प्राकृतिक सामान्य गति मध्य लय है, अर्थात् न तेज और न ही धीमी यह मध्य लय की तुलना में मध्यम, धीमा है या मध्य लय का अधिक विशिष्ट आधा होना बिलम्बित लय है। द्रुत लय मध्य लय का दोहरा (तेज गति) है। इस प्रकार तीन लय है- द्रुत (तेज), मध्य (मध्यम) और विलम्बित (धीमी)

4:5:9 यति

अयनार्धेयतिःसम्यकीर्तितोभरतादिभिः।
एतन्मतंममैवेतिनारदोमुनिरब्रवीत् ॥
समश्रोतोवहयतिर्गोपुच्छाचेतिसात्रिधा (?)।
एकथोर्वलयोयस्यधृतीसास्यात्समाभिधा ॥
द्रुतादयःक्रमाद्यत्रयतिःस्रोतोचहामता।
गोपुच्छाइतिविज्ञेयाद्रुतादीनांविपर्ययात् ॥[1]

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का नवाँ प्राण है। यति के विषय मे पंडित नारद के मतानुसार अयनार्ध (आधा वर्ष) को यति माना जाता है उपर्युक्त तीन लय के विभिन्न संयोजनों को यति नाम दिया गया है।

समा यति: जब ताल में बिना किसी बदलाव के प्रारम्भ से अंत तक एक ही लय पूरे ताल में रखा जाता है,जो एक वलय के समान लय को धारण करती है।पूर्ण द्रुत लय, मध्य लय, विलंबित लय हो तो इसे समायति कहा जाता है।

श्रोतोवाह यति: लय का तेज से धीमी गति में व्यवस्थित परिवर्तन श्रोतोवाह यति है। जैस प्रारम्भ मे विलम्बित-मध्य-द्रुत लय इसी प्रकार से प्रारम्भ मे विलम्बित लय से और अंत द्रुत लय से किया जाये इसे श्रोतोवाह यति कहा जाता है।

गोपुच्छा यति : श्रोतोवाह यति के बिल्कुल विपरीत लय की विविधता धीमी गति से तेजी गति मे बदलने से उत्पन्न हुई। यह परिभाषा 'संगीता मकरंद' के अनुसार है । नारद कहते है कि जब द्रुत आदि को अपने-अपने क्रम में बदल दिया जाता है, अर्थात् द्रुत मध्य और विलम्बित, (यद्यपि वह इसे उतने शब्दों में नहीं कहते है या

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-87-88/पृष्ठ-46

तीन लय के नामों का उपयोग नहीं करते है) और द्रुत के विपरीत क्रम, आदि, गोपुच्छा यति बनाता है। इसे स्पष्ट करना होगा क्योंकि अन्य लेखकों का एक अलग दृष्टिकोण है।

4:5:10 प्रस्तार

अन्येऽपिसन्तिभूयिष्ठास्तालास्तेलक्ष्यवर्त्मनः ।
प्रसिद्धविधिरत्रैवशास्त्रेऽस्मिन्प्रतिपादितः॥
तथेतितक्रयार्थंतु (?) लघूपायाभवन्त्यमी।
प्रस्तारसङ्ख्यानष्टंचोद्दिष्टंपातालकस्तथा ॥
द्रुतमेरुघुमेरुर्गुरुमेरुःप्लुतस्य च।
मेरुसंयोगमेरुश्चखण्डप्रस्तारकंतथा ॥
प्राचांचतुर्णामेरूणांनष्टोद्दिष्टंपृथकपृथक् ।
एकोनविंशतिरितिप्रेतिख्यानंब्रुवेधुना ॥ [1]

नारद कृत संगीत मकरंद के अनुसार यह ताल का दसवां प्राण है। नारद प्रस्तार के महत्व की व्याख्या करते हुए कहते है कि अभ्यास में अनगिनत ताल है, जिनका वर्णन इस काम में नहीं किया गया है। इसलिए उन्हें समझने के लिए उन्नीस आसान विधियों का नाम दिया गया है, प्रस्तार उन तरीकों में से एक है, जो नए तालों को समझने और प्राप्त करने में बहुत मददगार होंगी। प्रस्तार का अर्थ है विस्तार, यह प्राय: एक समीकरण या सरलीकरण की तरह है। इसमें कई विशिष्ट चरण होते है जिन्हें बड़ी इकाइयों को सबसे छोटी इकाई-द्रुत द्वारा प्रतिस्थापित करने के लिए किया जाता है। प्रस्तार समाप्त होता है जब एक ताल की सभी इकाइयों को कई द्रुतों में बदल दिया जाता है। लेकिन महत्वपूर्ण कारक एक प्रस्तार करते समय चरणों की संख्या और विशिष्ट नियमों का पालन किया जाता है। एक गुरु को चार द्रुत में नहीं बदला जा सकता है, जो कि द्रुत में इसका मूल्य तीन चरणों में है। यह नीचे दिए गए समीकरण अनुसार किया जाता है।

पहला चरण	S
दूसरा चरण	॥
तीसरा चरण	००।
चौथा चरण	०।०
पाँचवां चरण	।००
छठा चरण	०००० [2]

(1) नारद विरचित: संगीत मकरंद/नृत्याध्याय/तृतीय पाद:/श्लोक-89-92/पृष्ठ-47

(2) Lakshmi, M. Vijay/A critical study of Sangit Makaranda of Narada/ page.255

इसी तरह एक प्लुत को द्रुत द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने के लिए उन्नीस चरणों से गुजरना पड़ता है। द्रुत के बाद प्रस्तार समाप्त होता है। इस प्रकार "संगीत मकरंद" के देवर्षि नारद द्वारा ताल विषय को बहुत विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया है।

4:6 संगीत मकरंद में वर्णित तालों की उपादेयता

पंडित नारद कृत संगीत मकरंद के द्वितीय अध्याय नृत्याध्याय द्वितीय पाद: के एकोत्तरशत तालनामानि व काललक्षणानि में एकोत्तरशत ताल के नाम श्लोक 17 से 74 तक दिये गए है। इस अध्याय के माध्यम से शोध छात्रा पंडित नारद कृत संगीत मकरंद में वर्णित एकोत्तरशतताल के विषय में उपलब्ध माहिती व अध्ययन द्वारा प्राप्त सामाग्री से इस विषय को उजागर करने का प्रयास किया है। अध्ययन व विचार के पश्चात् यह ज्ञात हुआ की एकोत्तरशतताल के लक्षण में प्राचीन शास्त्रों की विधि का ही प्रयोग किया गया है, और उनके अनुसार ही वर्ण, मात्रा, अक्षर को आधार मान कर तालों के लक्षण को बताया गया है। विभिन्न साहित्य ग्रन्थों व संगीत ग्रन्थों में मात्रा, वर्ण, अक्षर भिन्न है, वर्तमान में प्रयोग होने वाली नवीन पद्धति के अनुसार प्राप्त होते है, जिससे यह माना जा सकता है, कि संगीत मकरंद में प्राचीन पद्धति का प्रयोग हुआ होगा, परंतु मार्गदर्शन व जिज्ञासा के अनुरूप शोधछात्रा ने इस विषय पर कार्य करने की इच्छा को जागृत रखते हुये कार्य किया और तथ्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया। संगीत मकरंद ग्रंथ में तालों को मार्गी व देसी तालों में विभाजित नहीं किया गया है। आचार्य भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र में उपलब्ध पंचमार्गी तालों के लक्षण की भांति ही संगीत मकरंद में एकोत्तरशत ताल के लक्षण प्राप्त होते है, जिनमें से किसी भी ताल में काकपाद, लघुविराम, द्रुत विराम का प्रयोग नहीं किया गया है। मुख्यता तालों का निर्माण अणुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत द्वारा ही प्राप्त होता है। अध्ययन से विभिन्न तथ्यों को समझने और उनके प्रयोग से विषय से संबन्धित जानकारी के अनुसार कुछ श्लोकों में द्रुत का बोधन व्योम और बिन्दु शब्द से भी किया गया है, तथा संगीत मकरंद के विभिन्न श्लोको में विरामान्त्यं का प्रयोग अनेक बार प्राप्त होता है। विरामन्तयं का अर्थ समान्य भाषा के अनुसार विराम+अंत अर्थात् अंत में विराम का प्रयोग। विरामन्तयं शब्द का प्रयोग संगीत मकरंद के विभिन्न श्लोको में देखने को मिलता है। पंडित नारद कृत संगीत मकरंद में वर्णित तालों के लक्षण से जुड़े प्रत्येक तथ्यो का आधार मानते हुये इस अध्याय मे न्यायसंगत कार्य करने का प्रयास किया गया है।

निष्कर्ष-इस अध्याय के माध्यम से शोध छात्रा द्वारा पंडित नारद कृत संगीत मकरंद मे वर्णित एकोत्तरशत ताल, दस ताल प्रबंध व ताल के दश प्राण, के विषय में उपलब्ध माहिती व अध्ययन द्वारा प्राप्त सामाग्री से इस विषय को उजागर करने का प्रयास किया गया है। शोध छात्रा को ऐसा प्रतीत हुआ कि यह विषय अनुसंधान योग्य है, इसलिए शोधछात्रा व शोध मार्गदर्शक के द्वारा अध्ययन व विचार के पश्चात् यह ज्ञात हुआ की नृत्याध्याय के तृतीय पाद मे ताल के दश प्राण और एकोत्तरशत ताल का समावेश ताल और नृत्य के बीच के संबंध को दर्शाता है। ताल के दश प्राण का वर्णन विभिन्न विद्वानो द्वारा विभिन्न संगीत ग्रन्थों मे किया गया है, परंतु ताल के दश प्राण मूल स्त्रोत नारद कृत संगीत मकरंद है। संगीत मकरंद ग्रंथ मे समान नाम वाले दशविधताल प्रबंधों का उल्लेख, बृहददेशी व मध्य काल के कुछ संगीत ग्रंथ जैसे 'संगीत रत्नाकर' व अन्य संगीत ग्रन्थों मे भी किया गया है। ताल के दस प्राणों में काल, मार्ग, क्रिया अंग, ग्रह, जाति, कला, लय, यति, प्रस्तार का विस्तार पूर्वक विवरण प्राप्त होता है। पंडित नारद कृत संगीत मकरंद में वर्णित एकोत्तरशत ताल, दस ताल प्रबंध व ताल के दश प्राण से जुड़े प्रत्येक तथ्यो का आधार मानते हुये इस अध्याय का कार्य पूर्ण किया गया है। पंडित नारद कृत संगीत मकरंद एक प्राचीन संगीत ग्रंथ है, जिसके विषय में विद्वानो के विभिन्न मत-मतांतर होते रहे है, परंतु शोध छात्रा का परम कर्तव्य है कि इस प्राचीन ग्रंथ से जुड़े सभी तथ्यो से अवगत कराये, संगीत मकरंद पंडित नारद द्वारा रचित संगीत का सम्पूर्ण ग्रंथ जो आध्यात्मिक रूप से शिव-शक्ति को समर्पित है, जिसमें गान, ताल, दश ताल प्रबंध ,ताल के दश प्राण, वाद्यों का वर्णन, नृत्य और नाट्य का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। परंतु अध्ययन के पश्चात यह निश्चित रूप से यह प्रतीत होता कि इसमें प्राचीन शास्त्र पद्धति का ही प्रयोग हुआ है।

*****